डॉ. राकेश जोशी की ग़ज़लें

1

अंधियारों से तो ये डर बोलेगा जाकर
दरबारों से कौन मगर बोलेगा जाकर

ये बोलेगा इससे, उससे वो बोलेगा
सरकारों से कौन मगर बोलेगा जाकर

तू भी है उस पार कहीं, इस पार कहीं मैं
दीवारों से कौन मगर बोलेगा जाकर

चांद, समुंदर, साजिश, कश्ती, ख़ामोशी है
मछुआरों से कौन मगर बोलेगा जाकर

जंगल–जंगल आग लगी है, बुझना होगा
अंगारों से कौन मगर बोलेगा जाकर

थोड़ा चूल्हा सुलगाओ कुछ धुआं दिखे तो
बंजारों से कौन मगर बोलेगा जाकर

क्या लिखना है, क्या लिखते हो, शर्म करो कुछ
अख़बारों से कौन मगर बोलेगा जाकर

2

लाचारी के दौर में कोई लाचारों के साथ नहीं था
तूफ़ानों के डर से कोई मछुआरों के साथ नहीं था

जंगल, बस्ती जहां कहीं भी आग लगाई थी जिस दिन भी

उस दिन कोई भी अंगारा अंगारों के साथ नहीं था

हर युग में लड़ने वाला हर सैनिक ख़ूब लड़ा था, पर वो
हथियारों के बीच में रहकर हथियारों के साथ नहीं था

सच्चाई के नाम पे जब–जब झूठ छपा था अख़बारों में
अख़बारों का अक्षर–अक्षर अख़बारों के साथ नहीं था

बिकने वाले की कीमत तो तय कर दी बाज़ारों ने, पर
बिकने वाला माल कभी भी बाज़ारों के साथ नहीं था

जंगल–जंगल, पर्वत–पर्वत, भटका लेकिन क्या जानूं मैं
क्यों बंजारा होकर भी मैं बंजारों के साथ नहीं था

3

हर नदी के पास वाला घर तुम्हारा
आसमां में जो भी तारा हर तुम्हारा

बाढ़ आई तो हमारे घर बहे बस
बन गई बिजली तो जगमग घर तुम्हारा

तुम अभी भी आँकड़ों को गढ़ रहे हो
देश भूखा सो गया है पर तुम्हारा

फिर तुम्हें कोई मदारी क्यों कहेगा
छोड़कर जाएगा जब बंदर तुम्हारा

ये ज़मीं इक दिन उसी के नाम पर थी

वो जिसे कहते हो तुम नौकर तुम्हारा

दूर उस फुटपाथ पर जो सो रहा है
उसके कदमों में झुकेगा सर तुम्हारा

4

सर छुपाने के लिए छप्पर नहीं था
लोग कहते हैं कि उसका घर नहीं था

इन ग़रीबों के लिए केवल सड़क थी
दौड़ पड़ने का कोई अवसर नहीं था

जो बनाने के लिए भटका बहुत वो
घर वहीं था, बस वही घर पर नहीं था

हम ही उसके गांव में रहने लगे थे
सच, हमारे गांव में बंदर नहीं था

पांव थे जो चल रहे थे बेवज़ह ही
मैं सफ़र में था, मगर अक्सर नहीं था

आज सब कुछ है मगर है नींद ग़ायब
वो भी दिन थे, नींद थी, बिस्तर नहीं था

फ़्लैट में रहकर अकेले थे बहुत हम
सर पे छत तो थी मगर अंबर नहीं था

गालियां तो हमने थीं जी–भर के दे दीं

हाथ में बस, आपका कॉलर नहीं था

तोड़ देते सभ्यता के कांच सारे
क्या करें पर, हाथ में पत्थर नहीं था

5

मत पूछिए कि किस तरह गाड़ी ख़रीद ली
बस्ती कहीं पे फिर से उजाड़ी, ख़रीद ली

तुमसे कहा गया था कि सपने ख़रीद लो
तुमसे उगे न पेड़ तो झाड़ी ख़रीद ली

उसको तो भूख–प्यास से इज़्ज़त बड़ी लगी
जिसने किसी के वास्ते साड़ी ख़रीद ली

उसको मिला है काम कि लहरें गिना करे
उसने समझ लिया है कि खाड़ी ख़रीद ली

दिन भर खड़ा था धूप में, बेचे थे नारियल
पैसे कमा के शाम को ताड़ी ख़रीद ली

सोने को उसको आज भी थोड़ी सड़क मिली
तुमने ज़मीन आज भी आड़ी ख़रीद ली

6

अगर जंगल में रहना है तो डर क्या है
तेरा है हाथ सर पर तो फ़िकर क्या है

सफ़र क्या है, नदी से पूछकर आना
समुंदर क्या बताएगा सफ़र क्या है

अँधेरे में बता मत तू कि है जगमग
उजाले में बता तेरा शहर क्या है

ख़बर वो है जो तुझको ख़ूब चौंका दे
अगर तुझको ख़बर है तो ख़बर क्या है

किसी फुटपाथ पर सोई ग़रीबी से
किसी मज़दूर से पूछो कि घर क्या है

ये बादल तो है अनपढ़ क्या बताएगा
फ़सल ही अब बताएगी ज़हर क्या है

7

मैं कल सारे प्रश्नों के हल सोच रहा था
जीवन में थोड़ी–सी हलचल सोच रहा था

पूछ रहा था दरिया मुझसे हाल मेरा जब
मैं बस्ती की गलियों में नल सोच रहा था

गारे–वारे, कंकड़–वंकड़, पत्थर–वत्थर
कांटों की दुनिया में चप्पल सोच रहा था

तू शहरों में रहकर सोच रहा था जंगल
मैं जंगल में रहकर जंगल सोच रहा था

तुम सर्दी में कल भी सोच रहे थे फैशन

मैं तो कल भी केवल कंबल सोच रहा था

सोच रही है वो मेरे हाथों के छाले

मैं उसके पैरों में पायल सोच रहा था

डॉ. राकेश जोशी, एसोसिएट प्रोफेसर (अंग्रेज़ी), राजकीय महाविद्यालय, मजरा महादेव, पौड़ी (गढ़वाल), उत्तराखंड

मोबाइल: 9411154939, ई–मेल: joshirpg@gmail.com